इकाई 13 भाषा आंदोलन और अनुवाद

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 स्वतंत्रता के बाद भाषाई राज्यों का पुनर्गठन

13.3 स्वतंत्रता के बाद राज्यों में अनुवाद : स्थिति एवं भूमिका

13.4 भारतीय प्रकाशन जगत में अनुवाद

13.5 अंतरराष्ट्रीय प्रकाशन संस्थान और भारतीय रचनाओं के अनुवाद

13.6 सारांश

13.7 अभ्यास के लिए प्रश्न

13.8 शब्दावली

13.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

13.0 उद्देश्य

- इस इकाई का उद्देश्य एक स्वतंत्र राष्ट्र के रूप में स्वयं को स्थापित करने में भारत के समक्ष आई जटिलताओं के बारे में आपको जानकारी प्रदान करना है;
- साथ ही हम भारतीय राज्यों को भाषाई आधार पर मान्यता देते हुए एक राष्ट्र के रूप में भारत के निर्माण की प्रक्रिया में आने वाली राजनीति के बारे में जानेंगे। स्वतंत्रता के बाद भारत के उन सांस्कृतिक क्षेत्रों के द्वारा सामना की जाने वाली समस्याओं के बारे में भी यहाँ चर्चा की जाएगी, जो मूलतः बहुभाषिक प्रकृति के थे;
- इसके पश्चात् हम स्वतंत्रता के बाद सरकार तथा स्थानीय लोगों के बीच संवाद के लिए महत्वपूर्ण माध्यम के रूप में अनुवाद एवं भारतीय क्षेत्रीय भाषा के विकास के लिए सरकार द्वारा अपनाई गई रणनीतियों का अध्ययन करेंगे;
- अंत में भारत में अनुवाद को एक विधा के रूप में स्थापित करने में भारतीय एवं अंतरराष्ट्रीय प्रकाशकों की भूमिका पर भी चर्चा की जाएगी।

13.1 प्रस्तावना

एक देश के रूप में भारत विभिन्न दृष्टिकोणों से कई प्रदेशों एवं उपभागों के योग से बना है। इसकी संस्कृति, भाषा, साहित्य, धर्म, इतिहास, भूगोल, जलवायु आदि विविधता को दर्शाते हैं। इसलिए भारत को अपने विभिन्न क्षेत्रों एवं लोगों को भारतीयता के अंदर एकजुट रखने में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ा। औपनिवेशिक शासन के 200 वर्षों के कार्यकाल में इसमें कई अन्य विविधताएँ भी जुड़ीं। उपनिवेशवाद का एक सकारात्मक पहलू यह था कि इसने भारत के बिखरे हुए लोगों को राजनैतिक रूप से एक राष्ट्र के रूप में एकजुट किया, जो उपनिवेशवादियों के खिलाफ थे। इसके कारण 1857 की क्रांति के बाद 100 वर्षों से भी कम समय के भीतर भारत एक स्वतंत्र राष्ट्र बन गया। हालाँकि आजादी के बाद भारत को अपना संविधान मिल गया था, लेकिन उपनिवेशवादियों की नीतियों के कुछ प्रभाव रह गए थे, जिसके कारण भारत को भाषा, धर्म तथा कई अन्य मामलों में अपनी पहचान के लिए लंबे समय तक संघर्ष करना पड़ा।

इससे पहले की इकाई में आपने पढ़ा कि उत्तर औपनिवेशिक काल में किस प्रकार भारत के साहित्यिक क्षेत्र में 'डायस्पोरा' और 'सबअल्टर्न स्टडीज' का विकास हुआ। स्वतंत्रता के बाद राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में भाषाई संदर्भ में भारतीय राज्यों की विशिष्ट स्थापना और इस प्रक्रिया में अनुवाद की भूमिका पर चर्चा की आवश्यकता है।

भारत बहुभाषी देश रहा है। देशी भाषाओं जैसे संस्कृत को प्राकृत भाषाओं ने सींचा और फिर आधुनिक भाषाओं का विकास हुआ। इसी बीच अरबी, फारसी तथा तुर्की भाषाएँ इनमें आकर जुड़ीं। पर भाषाई स्थिति में सबसे बड़ा बदलाव उपनिवेश काल में आया, जब यूरोपीय भाषाओं का भारत में आगमन हुआ। ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना और जीत के बाद औपनिवेशिक शासकों के बीच प्रशासनिक भाषा चर्चा का विषय थी। 2 फरवरी, 1835 को लॉर्ड मैकाले ने गवर्नर जनरल सर विलियम बेंटिक के समक्ष भारतीय शिक्षा पर अपना प्रस्ताव पेश किया, जिसे उन्होंने उसी साल 7 मार्च को मंजूरी दे दी। अपने प्रस्ताव में लॉर्ड मैकाले ने संस्कृत एवं अरबी भाषा के साहित्य को पूरी तरह बेकार करार देते हुए कहा कि ये यूरोपीय पुस्तकालयों में रखने योग्य भी नहीं हैं। इसलिए उन्होंने कहा कि भारतीयों को उनकी मातृभाषा में शिक्षा नहीं दी जा सकती। इस प्रकार, गवर्नर जनरल की मंजूरी से अंग्रेजी 19वीं सदी के भारत में प्रशासन के साथ-साथ शिक्षण के माध्यम की भाषा भी बन गई।

ब्रिटिश शासनकाल में भारत की भाषाओं के व्यापक सर्वेक्षण *भारतीय भाषाई सर्वेक्षण* में 364 भाषाओं एवं बोलियों की पहचान की गई। यह ब्रिटिश राज की परियोजना थी, जो 1894 और 1928 के बीच भारतीय प्रशासनिक सेवा के अधिकारी जॉर्ज ए. ग्रियर्सन के दिशा-निर्देश पर की गई थी। ग्रियर्सन का काम अप्रशिक्षित क्षेत्र-कार्यकर्ताओं पर आधारित था और इसमें बर्मा, मद्रास तथा तत्कालीन रियासतों – हैदराबाद एवं मैसूर की उपेक्षा की गई थी। इसका परिणाम यह हुआ कि सर्वेक्षण रिपोर्ट में भारतीय राज्यों को उचित प्रतिनिधित्व नहीं मिल पाया।

स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू जैसे राजनीतिक चिंतकों ने भारत की क्षेत्रीय भाषाओं के पक्ष में आवाज उठाई थी। उन्होंने राज्यों के भाषाई आधार पर पुनर्गठन का भी समर्थन किया। हालाँकि स्वतंत्रता के बाद कई राज्यों का गठन भाषा के आधार पर हुआ और देश के कई हिस्सों में भाषाई आंदोलन भी हुए। वैसे तो, भारत में भाषाई आंदोलन का इतिहास लंबा है, जो मुगल साम्राज्य के समाप्त होने के तुरंत बाद शुरू हो गया था। तब प्रशासनिक कामकाज के लिए उर्दू एवं (देवनागरी लिपि वाली) हिंदी के इस्तेमाल को लेकर विवाद शुरू हुआ। इस इकाई में हम स्वतंत्रता से पहले के भाषा आंदोलन पर चर्चा करने के बजाए उन भाषा आंदोलनों पर चर्चा करेंगे जो उत्तर-औपनिवेशिक स्वतंत्र भारत में राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में सामने आए।

अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इस इकाई को जिन भागों में बाँटा गया है; वे हैं – (1) स्वतंत्रता के बाद भारतीय भाषाओं का विकास, (2) स्वतंत्रता के बाद भारतीय राज्यों में अनुवाद की भूमिका, (3) भारतीय प्रकाशन जगत में अनुवाद; तथा (4) भारतीय अनुवाद एवं अंतर्राष्ट्रीय प्रकाशन की भूमिका।

13.2 स्वतंत्रता के बाद भाषाई राज्यों का पुनर्गठन

स्वतंत्रता के बाद भारत सरकार ने राज्यों के पुनर्गठन का निर्णय लिया, जिसका सपना महात्मा गाँधी एवं जवाहरलाल नेहरू ने देखा था। भाषा, संस्कृति, विकास एवं एकता जैसे चार मौलिक सिद्धांतों और प्रशासनिक सुविधा पर ध्यान केंद्रित करते हुए 1953 में राज्य पुनर्गठन आयोग का गठन किया गया, जिसे एकभाषी एवं द्विभाषी राज्यों के गठन की जिम्मेदारी सौंपी गई। आयोग का गठन इस सोच के तहत किया गया कि भाषाई एकरूपता से प्रशासनिक कामकाज में सुविधा होगी। सरकार ने राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 की अनुशंसाओं को स्वीकार किया और एक बार फिर राज्यों की भाषाई समानता के आधार पर भारत का मानचित्र तैयार किया। इस क्रम में छह केंद्र-शासित प्रदेशों सहित राज्यों की संख्या 27 से घटाकर 14 कर दी गई।

भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में 1950 में 14 भाषाओं को जोड़ा गया। ये असमिया, बांग्ला, गुजराती, हिंदी, कन्नड़, कश्मीरी, मलयालम, मराठी, उड़िया, पंजाबी, संस्कृत, तमिल, तेलुगु एवं उर्दू हैं। उसके बाद से इस सूची का तीन बार विस्तार किया गया। पहली बार इसमें सिंधी भाषा को जोड़ा गया। दूसरी बार कोंकणी, मणिपुरी एवं नेपाली को जोड़ा गया और तीसरी बार बोडो, डोगरी, मैथिली एवं संथाली को इसमें जोड़ा गया। ये सभी भारतीय भाषाएँ आधुनिक भारतीय भाषाओं (मॉडर्न इंडियन लैंग्वुएजेज – एम.आई.एल.) के रूप में जानी जाती हैं। इस सूची में अब भी कई भाषाओं को जोड़ा जा सकता है।

भाषाई आधार पर राज्यों के पुनर्गठन ने भाषाई पहचान के दावे को प्रोत्साहित किया, जिसके कारण देश के विभिन्न हिस्सों में कई भाषाई आंदोलन एवं प्रदर्शन हुए। इन भाषाई आंदोलनों का मुख्य कारण यह मानना रहा कि भाषाई अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा को अपेक्षित ढंग से कार्यान्वित नहीं किया गया था। केंद्र सरकार की भाषा अर्थात् राजभाषा के रूप में हिंदी को लागू करने के कारण भी अवांछित प्रदर्शन हुए।

भाषाई संवेदनशीलता

भारतीय संविधान में 1950 में प्रावधान किया गया कि केंद्र सरकार की राजभाषाएँ हिंदी और अंग्रेजी होंगी। 15 साल के भीतर यानी 1965 तक केंद्र सरकार की राजभाषा के रूप में हिंदी को अपनाना अनिवार्य किया गया। संविधान में यह व्यवस्था की गई कि संविधान के लागू होने के प्रथम पाँच वर्ष तथा दस वर्ष के पश्चात् राष्ट्रपति राजभाषा आयोग नियुक्त करेंगे। आगे चलकर इसके तहत राजभाषा अधिनियम, 1963 बना, जिसमें यह कहा गया कि हिंदी 1965 में देश की एकमात्र राजभाषा होगी और अंग्रेजी हालाँकि 'संबद्ध अतिरिक्त राजभाषा' के रूप में रहेगी। वास्तव में सांविधानिक व्यवस्था के आलोक में पाँच वर्ष के बाद संसदीय समिति को हालात पर विचार करना था और इस बारे में भी सोचना था कि यदि अन्य भाषा को जानने वालों के बीच हिंदी ठीक ढंग से अपनी पैठ नहीं बना पाई है तो क्या अंग्रेजी का दर्जा बरकरार रखा जाएगा? राजभाषा संबंधी सांविधानिक-वैधानिक प्रावधानों के बारे में आप एम.टी.टी.-013 की इकाई-1 में पहले ही अध्ययन कर चुके हैं। यहाँ हम भाषा की राजनीति के संदर्भ पर ही केंद्रित कर रहे हैं।

गृह मंत्रालय ने 1964 में सभी मंत्रालयों से हिंदी को राजभाषा बनाए जाने के संबंध में प्रगति रिपोर्ट और 1965 में हिंदी को राजभाषा बनाए जाने के बाद की योजना की जानकारी मांगी। गृह मंत्रालय के इस कदम के बाद 1964 के अंत में और 1965 की शुरुआत में तमिलनाडु में विरोध प्रदर्शन भड़के, जिसके कारण केंद्र सरकार को अपने रुख पर पुनर्विचार करना पड़ा। परिणामस्वरूप नई दिल्ली में जून 1965 में हुए सम्मेलन में गैर-हिंदी भाषी राज्यों को आश्वस्त किया गया कि हिंदी को केंद्र सरकार और राज्यों में एकमात्र राजभाषा के रूप में तब तक नहीं थोपा जाएगा, जब तक कि एक भी राज्य इसका विरोध करेगा।

भाषा का मुद्दा क्षेत्रीय अस्मिता के साथ जुड़ा होने के कारण अत्यंत संवेदनाशील मुद्दा रहा है। तमिलनाडु में यह सबसे अधिक ज्वलंत मुद्दे के रूप में उभरकर आया है। किसी भी अन्य भाषा के संभावित प्रभुत्व के विरुद्ध विशेषकर 1960 के दशक में आंदोलन भी चले। हिंदी के विरोध में पहला प्रदर्शन 1937 में हुआ था, जब सरकार ने मद्रास प्रेसीडेंसी के स्कूलों में हिंदी पढ़ाना अनिवार्य किया था। यह प्रदर्शन तीन साल तक चला और इस दौरान कई सम्मेलन, मार्च, उपवास, धरना एवं प्रदर्शन हुए। सरकार की ओर से अनुकूल जवाब नहीं मिलने के कारण दो प्रदर्शनकारियों की मौत हो गई और महिलाओं एवं बच्चों सहित अनेक लोगों को गिरफ्तार किया गया। बाद में मद्रास के ब्रिटिश गवर्नर लॉर्ड इर्सकाइन ने 1939 में कांग्रेस सरकार के इस्तीफा देने के बाद फरवरी 1940 में हिंदी शिक्षा को अनिवार्य बनाने वाला आदेश वापस ले लिया। इसके बाद हिंदी को राजभाषा घोषित होने के विरोध में तमिलनाडु में हिंदी विरोधी आंदोलन शुरू हुआ जिसे छात्र समूहों का भी समर्थन मिला। पहला विरोध प्रदर्शन 25 जनवरी 1965 को मदुरै में हुआ। फिर वह पूरे तमिलनाडु में फैल गया और अगले दो माह तक हिंसा, आगजनी, लूट, पुलिस की गोलीबारी, लाठीचार्ज की कई घटनाएँ हुईं। इस कारण करीब 70 लोगों की मौत हुई। स्थिति को नियंत्रित करने के लिए भारत के तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री लाल बहादुर शास्त्री ने आश्वासन दिया कि अंग्रेजी तब तक राजभाषा बनी रहेगी, जब तक हिंदीतर भाषी राज्य ऐसा चाहेंगे। शास्त्री जी के इस आश्वासन के बाद दंगों और प्रदर्शन पर रोक लगी।

मद्रास प्रांत में तेलुगु भाषी समुदायों द्वारा नए राज्य की माँग के कारण 1953 में आंध्र प्रदेश का निर्माण हुआ। 1956 में केंद्र सरकार ने मद्रास प्रेजीडेंसी और हैदराबाद रियासत के तेलुगु भाषी क्षेत्रों को मिलाकर एक अलग राज्य आंध्र प्रदेश का गठन किया। हालाँकि आंध्र प्रदेश के 80 प्रतिशत से अधिक लोग तेलुगु बोलते हैं, लेकिन अधिकतर भारतीय राज्यों की तरह यहाँ कुछ संख्या भाषाई अल्पसंख्यकों की भी है। ये भाषाई अल्पसंख्यक उर्दू बोलते हैं और मुख्यतः राज्य की राजधानी हैदराबाद में रहते हैं, जहां करीब 40 प्रतिशत आबादी उर्दू बोलती है। हालाँकि 1960 के दशक के उत्तरार्द्ध और 1970 के दशक के पूर्वार्द्ध में दो अलग राज्यों के गठन के लिए दंगे हुए, लेकिन अलगाव नहीं हुआ।

भाषायी अस्मिता का मुद्दा अब भी संवेदनशील है, पर यातायात के साधनों की गति में वृद्धि के कारण देश के एक कोने से दूसरे कोने में लोगों का आवागमन बढ़ा है। अतः भाषायी बंधन काफी शिथिल हुए हैं। फिल्मों ने इसमें अपनी भूमिका निभाई है। फिर भी राजनैतिक या भाषायी अति-उत्साह के कारण आज भी तनाव की स्थिति पैदा हो जाती है। मुंबई में मराठी भाषा के मुद्दे पर अन्य भाषाओं, विशेषकर हिंदी, के साथ तनाव की घटनाएँ इसका उदाहरण है।

भाषा अनुक्रम एवं संघर्ष

आजादी के वर्षों में भाषा से संबंधित आंदोलन उन राज्यों में हुए, जहाँ बहुत कम लोग उस राज्य की क्षेत्रीय भाषा की तुलना में अन्य भाषा बोलते थे। बड़े पैमाने पर बोली जाने वाली क्षेत्रीय भाषा के प्रभुत्व एवं चयन तथा भाषायी अल्पसंख्यकों के अधिकारों की सुरक्षा नहीं किए जाने के कारण भारत के कई राज्यों में विरोधी समूहों का गठन हुआ।

असम में असमिया को प्रदेश की राजभाषा घोषित किए जाने के बाद भाषाई आंदोलन हुए, जिसे *भाषा आंदोलन* के नाम से जाना गया। 3 मार्च, 1960 को असम के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री बिमला प्रसाद चलीहा ने असमिया को असम की राजभाषा घोषित किए जाने के मुद्दे पर भाषण दिया। इसके बाद पूरे क्षेत्र में असमिया को राजभाषा के रूप में स्थापित करने को लेकर प्रचार शुरू हो गया। इससे असम की बैरक घाटी के लोग नाराज हो गए, जो अधिकतर बांग्ला भाषी लोग थे। 16 अप्रैल, 1960 को बैरक घाटी के सिल्चर में असमिया को राजभाषा बनाए जाने की कोशिशों के विरोध में स्थानीय लोगों ने आंदोलन शुरू किया। 3 जुलाई, 1960 को प्रदर्शनकारी छात्रों पर पुलिस ने गोली चलाई, जिसमें एक असमी छात्र की मौत हो गई। इसके बाद ब्रह्मपुत्र घाटी क्षेत्र में हिंसा भड़क उठी और 'बंगाल खेड़ा आंदोलन' की शुरुआत हुई, जिसका शाब्दिक अर्थ 'बंगालियों का निष्कासन' है। इसका परिणाम पूरे राज्य से हजारों बंगालियों के विस्थापन के रूप में सामने आया। गैर-असमी छात्रों को विश्वविद्यालय एवं कॉलेज छोड़कर जाने के लिए मजबूर कर दिया गया। बैरक घाटी में इसका विरोध हुआ। 19 मई, 1961 को सिल्चर में 11 प्रदर्शनकारियों को गोली मार दी गई, जिन्हें बाद में 'भाषा शहीद' का दर्जा दिया गया। इस विरोध-प्रदर्शन के बाद सरकार ने असमिया को ब्रह्मपुत्र घाटी और बांग्ला को बैरक घाटी की राजभाषा घोषित किया।

मणिपुर में हुआ भाषा आंदोलन अलग प्रकृति का था। आधिकारिक रूप से 'मणिपुरी' के रूप में जानी जाने वाली 'मितीलॉन' मणिपुर की राजभाषा है, जो राज्य में विभिन्न जनजातीय एवं गैर-जनजातीय समुदायों द्वारा सार्वजनिक भाषा के रूप में इस्तेमाल की जाती है। मुद्राशास्त्र और अन्य ऐतिहासिक सूत्रों के अनुसार, मिती भाषा ने अपनी अलग लिपि एवं व्याकरण का विकास किया।

मणिपुर में जब हिंदू धर्म आया, उस समय उसके अधिकतर प्रवर्तक तथा प्रश्रयदाता बंगाली हिन्दू थे स्वाभाविक था कि धार्मिक सिद्धांतों के साथ बांग्ला लिपि भी साथ में आई। बाद में मिती राजा ने इस लिपि को पूर्ववर्ती मिती के स्थान पर राज्य की भाषा के लिए लागू किया। पूया नाम से जाने जाने वाले सभी पूर्ववर्ती हिन्दू धार्मिक मूल पाठ जला दिए गए। इसके बाद मितियों को 250 वर्षों से भी अधिक समय तक उनकी अपनी ही लिपि का इस्तेमाल करने से रोक दिया गया। आधुनिक समय में राज्य में मिती लिपि की पुनःस्थापना, संरक्षण, विकास एवं संवर्धन के लिए नई कोशिशें शुरू हुईं। इसके बाद मिती को भारतीय संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल करने तथा मणिपुर में प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा के माध्यम के रूप में मिती को लागू करने की माँग उठी। इस आंदोलन को कई आंतरिक एवं बाह्य चुनौतियों का भी सामना करना पड़ा। आंदोलन को मिती भाषा के प्रति राज्य सरकार की सहानुभूति एवं 29 जनजातीय भाषाओं के प्रति उदासीनता को लेकर अन्य समुदायों के प्रतिरोध से भी चुनौती मिली।

कुछ राज्यों में भाषा की अस्मिता के कारण राज्यों का पुनर्गठन भाषाई आधार पर हुआ। जैसा कि पहले ही उल्लेख किया जा चुका है कि तेलुगु भाषी लोगों के कारण आंध्र प्रदेश का गठन हुआ, हालाँकि इसकी वजह से कुछ दुखद घटनाएँ हुईं। 1960 में बंबई प्रांत को गुजरात एवं महाराष्ट्र, दो राज्यों में बाँट दिया गया। पंजाब एवं हरियाणा का विभाजन 1966 में हुआ। पूर्वोत्तर भारत के राज्यों का पुनर्गठन 1970 के दशक के पूर्वार्द्ध में हुआ। हालाँकि पुनर्गठन हमेशा केवल भाषा के आधार पर नहीं हुआ। भाषा के अलावा कई अन्य राजनैतिक कारण भी इस प्रक्रिया में शामिल रहे थे।

13.3 स्वतंत्रता के बाद राज्यों में अनुवाद : स्थिति एवं भूमिका

पिछले भाग में हमने पढ़ा कि किस प्रकार बहुभाषिक राज्यों में एक राष्ट्रीय भाषा को थोपे जाने के कारण अप्रिय घटनाएँ हुईं। इस समस्या के समाधान के लिए भारत सरकार ने अगस्त 1961 में त्रि-भाषा सूत्र या 'थ्री लैंग्वुएज फार्मूला' (टी.एल.एफ.) अपनाया। 'राष्ट्रीय' भाषा के रूप में हिंदी को मान्यता देने के अतिरिक्त हर राज्य को 'क्षेत्रीय' एवं 'स्थानीय' भाषा के रूप में दो अन्य भाषाओं के चयन का विकल्प दिया गया। हालाँकि, टी.एल.एफ.

उन राज्यों में भाषा से संबंधित मुद्दों का समाधान नहीं कर पाया, जहाँ कई भाषाएँ बोलने वाले समुदाय हैं। यह नीति सभी भारतीय भाषाओं को 'अनुसूचित' एवं 'गैर-अनुसूचित' वर्ग में विभाजित करती है। इससे भाषाई अनुक्रम का विकास हुआ, जिसमें हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में सबसे ऊपर रखा गया। इसके बाद 'क्षेत्रीय भाषा' का स्थान आता है, जो एक भौगोलिक क्षेत्र विशेष में बेहद प्रभावशाली हो या जिसका प्राचीन भारत की धरोहर के रूप में एक इतिहास रहा हो। इस भाषायी अनुक्रम में सबसे निचले पायदान पर 'बोलियों' को रखा गया। हालाँकि तिब्बती-बर्मन और ऑस्ट्रो-एशियाटिक जैसी भाषाओं को 'बोलियों' की श्रेणी में रखे जाने के कारण इन भाषाओं को बोलने वाले समुदायों में असंतोष पैदा हुआ था।

प्रशासन में किसी भाषा के इस्तेमाल के कारण उस संबद्ध भाषा के विकास एवं उसे एक मानक के रूप में विकसित करने की आवश्यकता महसूस हुई। भारत ने इसके लिए केंद्र एवं राज्य, दोनों स्तर पर कदम उठाए। केंद्र स्तर पर गठित कई आयोगों एवं बोर्ड ने राज्य सरकारों द्वारा शुरू किए गए भाषायी विकास कार्यक्रमों की समीक्षा की। भारत सरकार ने भाषाई शोध एवं विकास के लिए कुछ प्रमुख संस्थानों की स्थापना भी की, जिनमें वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग (कमीशन फॉर साइंटिफिक एंड टेक्निकल टर्मिनोलॉजी – सी.एस.टी.टी.), केंद्रीय हिंदी निदेशालय (सेंट्रल हिंदी डाइरेक्टरेट – सी.एच.डी.), क़ौमी काउन्सिल बराए फ़रोग-ए-उर्दू ज़बान (नेशनल काउन्सिल फॉर द प्रमोशन ऑफ उर्दू लैंग्वेज - एन.सी.पी.यू.एल.), केंद्रीय हिंदी संस्थान – सी.आई.एच.), केंद्रीय भारतीय भाषा संस्थान (सेंट्रल इंस्टीट्यूट ऑफ इंडियन लैंग्वुएजेज- सी.आई.आई.एल.), सिंधी भाषा के प्रोत्साहन के लिए राष्ट्रीय सिंधी भाषा विकास परिषद (नेशनल काउंसिल फॉर प्रमोशन ऑफ सिंधी लैंग्वुएज - एन.सी.पी.एस.एल.) प्रमुख हैं। सी.एस.टी.टी. ने तकनीकी शब्दावलियों (जिनमें हिंदी एवं अन्य क्षेत्रीय भाषाओं सहित प्रशासनिक भाषा की शब्दावली भी शामिल है) का मानकीकरण सुनिश्चित करने के लिए कई परियोजनाएँ शुरू कीं। सी.एच.डी., एन.सी.पी.यू.एल. तथा एन.सी.पी.एस.एल. क्रमशः हिंदी, उर्दू एवं सिंधी भाषा के विकास के लिए जिम्मेदार हैं। सी.आई.एच. शिक्षकों एवं अधिकारियों को हिंदी भाषा का प्रशिक्षण देता है, ताकि वे प्रशासन में हिंदी का इस्तेमाल कर सकें।

सी.आई.आई.एल. मुख्य रूप से विभिन्न भाषाओं में अनुवाद परियोजनाओं एवं अन्य गतिविधियों में संलग्न है। इसने *अनुकृति* जैसी कई बड़ी अनुवाद परियोजनाएँ शुरू कीं। यह परियोजना अनुवादकों एवं अनुवाद का अध्ययन करने वालों के लिए बेहद मददगार साबित हुई। इसकी वेबसाइट पर अनुवाद से संबंधित सभी तरह की जानकारियाँ उपलब्ध हैं। इसने 'ट्रांसलेशन टुडे' नाम से मुद्रित तथा ऑनलाइन अनुवाद जर्नल भी शुरू किया। *कथा भारती* एक अन्य बड़ी परियोजना है, जिसे इस संस्था ने साहित्य अकादमी के साथ मिलकर शुरू किया। साहित्य अकादमी, भारतीय भाषाओं की 100 बेहतरीन आधुनिक कथा साहित्य (उपन्यास, लघुकथाएँ) को अन्य भारतीय भाषाओं तथा मुख्य रूप से अंग्रेजी में और कभी-कभी फ्रेंच, जर्मन, स्पेनिश, इतालवी तथा अन्य अंतरराष्ट्रीय भाषाओं में उपलब्ध करवाती है। इस वक्त यह संस्था राष्ट्रीय अनुवाद मिशन (एन.टी.एम.) नाम से जानी जाने वाली परियोजना से जुड़ी है। यह मिशन ज्ञान आधारित पाठों को अनुवाद के जरिए संविधान की आठवीं अनुसूची में शामिल सभी भारतीय भाषाओं में उपलब्ध करवाने का प्रयास कर रहा है। इसका मुख्य उद्देश्य शब्दकोशों एवं पर्याय कोशों जैसे अनुवाद के गुणवत्तापूर्ण साधनों का विकास करना, अंग्रेजी तथा भारतीय भाषा, एक भारतीय भाषा से दूसरी भारतीय भाषा, भारतीय भाषाओं एवं बड़ी वैश्विक भाषाओं के बीच मशीनी अनुवाद एवं मनुष्य की सहायता से कंप्यूटर अनुवाद को बढ़ावा देना है।

राज्य स्तर पर कई राज्यों ने संबद्ध क्षेत्रीय भाषाओं में शैक्षणिक सामग्री की तैयारी के लिए विश्वविद्यालय एवं स्कूल स्तरीय पाठ्य पुस्तक बोर्डों का गठन किया है। कुछ राज्यों ने अपनी संबद्ध प्रशासनिक भाषा में अधिकारियों को प्रशिक्षित करने के लिए भाषा विभागों, अकादमियों, प्रशिक्षण संस्थानों की भी स्थापना की है। भाषा से संबंधित बहुत से विभाग एवं अकादमियाँ मानक पाठ्य पुस्तकों, कार्यालयी नियमावली एवं प्रक्रियाओं के क्षेत्रीय भाषाओं में अनुवाद के काम में जुटी हैं। राज्य सरकारों की ओर से आयोजित सेवाकालीन प्रशिक्षण के दौरान अधिकारियों एवं कर्मचारियों को राज्य की राजभाषा के इस्तेमाल का प्रशिक्षण दिया जाता है। कुछ राज्य, प्रशासन में राज्य की राजभाषा के इस्तेमाल के लिए अपने अधिकारियों एवं कर्मचारियों को प्रोत्साहन देते हैं। कुछ राज्य सरकारें मैथिली, राजस्थानी, भोजपुरी, ब्रज, पहाड़ी जैसी हिंदी की बोलियों और आदिवासी भाषाओं का संरक्षण करती हैं।

इस प्रकार, भारत में कोई ऐसा राज्य नहीं है, जहाँ एकमात्र भाषा बोली जाती हो। इसलिए चाहे प्रशासनिक कामकाज की बात हो या शिक्षा के माध्यम की बात, भाषा का चयन हमेशा एक समस्या रही है। राज्य सरकारें विभिन्न क्षेत्रीय एवं स्थानीय भाषाओं को अलग-अलग भूमिकाएँ देकर इस समस्या के समाधान की कोशिश कर रही हैं।

13.4 भारतीय प्रकाशन जगत में अनुवाद

हमने भारतीय राष्ट्र की सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं स्वाभाविक विशेषता, भाषायी विविधता के कारण उपस्थित होने वाली समस्याओं के बारे में जाना। इसकी वजह से भारत में एक अनुशासन के रूप में अनुवाद के बहुत विकास के बावजूद अधिकतर अनुवाद क्षेत्रीय भाषाओं से अंग्रेजी में और अंग्रेजी से क्षेत्रीय भाषाओं में ही उपलब्ध हैं। हालाँकि क्षेत्रीय भाषाओं के बीच भी परस्पर अनुवाद हुए हैं, लेकिन उन्हें राष्ट्रीय या अंतरराष्ट्रीय पठनीयता के बजाय स्थानीय पठनीयता ही हासिल हुई है। वैसे, कोई भी किसी क्षेत्रीय भाषा की पाठ्य-सामग्री को अनुवाद के जरिए व्यापक पठनीयता प्रदान करने एवं लोकप्रिय बनाने में भारतीय प्रकाशकों की भूमिका से इनकार नहीं कर सकता।

19वीं एवं 20वीं सदी में अनूदित कार्यों, जो मुख्यतः उपनिवेशवादियों द्वारा किए गए प्रयास थे, के प्रकाशन की बहुत कम कोशिशें हुईं। कुछ उपनिवेशवादियों ने प्रिंटिंग प्रेस स्थापित करने का सामूहिक प्रयास किया, जब श्रीरामपुर मिशन प्रेस की स्थापना हुई। हालाँकि शुरुआत में यह प्रेस केवल *बाइबिल* के विभिन्न भाषाओं में अनुवाद के प्रकाशन से संबंधित कार्यों में संलग्न थी, लेकिन बाद में इसने महत्वपूर्ण भारतीय भाषाओं में शब्दकोशों एवं धार्मिक तथा साहित्यिक सामग्रियों का प्रकाशन भी शुरू किया। स्वतंत्रता से पहले के भारत में राजपाल एंड संस, रेनेसांस पब्लिकेशन, नवजीवन प्रेस इत्यादि जैसे अन्य प्रकाशकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही।

देश की विभिन्न सांस्कृतिक एवं पारंपरिक विरासतों को समझने के लिए लोगों में रुचि विकसित करने के उद्देश्य से देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने नौकरशाही के नियंत्रण के बगैर विभिन्न संस्थाओं की स्थापना का निर्णय लिया। इस प्रकार, साहित्य अकादमी (1954) और नेशनल बुक ट्रस्ट (1957) जैसी संस्थाएँ स्वायत्त संस्थाओं के रूप में अस्तित्व में आईं, जिन्हें सरकार से अनुदान मिल रहा है।

साहित्य अकादमी की स्थापना देश की क्षेत्रीय भाषाओं में साहित्य के विकास एवं देश की सांस्कृतिक एकजुटता को बढ़ावा देने के उद्देश्य से की गई थी। इस अकादमी का उद्देश्य देश में साहित्यिक गतिविधियों के क्षेत्र में उच्च मानदंड स्थापित करना है। भारतीय साहित्य की व्यापकता एवं विविधता पर चर्चा तथा सभी आधुनिक भारतीय भाषाओं से साहित्यिक पुस्तकों के प्रकाशन जैसी भारतीय साहित्य से संबंधित विभिन्न गतिविधियों के जरिए यह अकादमी अनूदित एवं मौलिक साहित्य के माध्यम से राष्ट्र निर्माण का उद्देश्य पूरा कर रही है।

इसी क्रम में भारत में नेशनल बुक ट्रस्ट (एन.बी.टी.) की स्थापना 1957 में हुई थी। इसका उद्देश्य भारत के सभी क्षेत्रों से अच्छे साहित्य का सभी मान्यता प्राप्त भाषाओं में प्रकाशन करना और इन पुस्तकों को कम कीमत पर लोगों को उपलब्ध करवाना है, ताकि भारत में पुस्तक पठनीयता में वृद्धि हो। उनके द्वारा जिस भाषा में अनुवाद किया जाता है, उसमें दो बातों को ध्यान में रखा जाता है – (क) भारतीय भाषा से दूसरी भाषा में भारतीय लेखकों के असाधारण कार्यों का अनुवाद; और (ख) विदेशी भाषा की बेहतरीन पुस्तकों का अनुवाद।

स्वतंत्रता के बाद अधिकतर प्रकाशन समूह स्कूलों एवं कॉलेजों के लिए अंग्रेजी पाठ्य सामग्रियों का प्रकाशन करते थे, जिनके उपभोक्ता अधिकतर अकादमिक लोग होते थे। लेकिन पिछली सदी के 60 के दशक से बदलते परिदृश्य में जब सरकार ने स्कूल की पाठ्य पुस्तकों के राष्ट्रीयकरण का निर्णय लिया तो कई प्रकाशन घरों ने अपना ध्यान व्यापक उपभोक्ता समूहों से व्यक्तिगत खरीदारों और अकादमिक पुस्तकों की बजाय सामान्य रुचि की पुस्तकों के प्रकाशन पर केंद्रित किया।

एशिया पब्लिशिंग हाउस, राइटर्स वर्कशॉप, जैको पब्लिशिंग हाउस, विकास पब्लिकेशंस जैसे कुछ प्रकाशक साठ के दशक में भी भारतीय लेखकों का काम सामने लाने के लिए संघर्षरत थे। सत्तर एवं अस्सी के दशक में कोई बड़ा सुधार नहीं हुआ, क्योंकि न तो क्षेत्रीय भाषाओं से अंग्रेजी में अनुवाद और न ही पठनीयता में वृद्धि हुई। यह भी एक तथ्य है कि भारत में उन दशकों में कम अंग्रेजी पढ़ने वाले लोगों ने अंग्रेजी में अंग्रेज लेखकों या यूरोपीय लेखकों की पुस्तकें पढ़ने को प्राथमिकता दी।

अंग्रेजी में अनुवाद को नब्बे के दशक में बढ़ावा मिला, जब इसके लिए एक निश्चित योजना बनाई गई और इसका प्रचार-प्रसार किया गया। आर्थिक स्तर पर भी 1991 के सुधारों ने सार्वजनिक क्षेत्र के एक बड़े हिस्से को उदार बनाया। सुधार के इन एजेंडों को मूर्त रूप देने के क्रम में उदारीकरण का अन्य कारकों के साथ-साथ स्वदेशी सांस्कृतिक उत्पादों से भी सामना हुआ। डेस्क टॉप पब्लिशिंग जैसी उन्नत प्रौद्योगिकी से न केवल प्रकाशन उद्योग

में सुधार हुआ, बल्कि इससे पुस्तकों के स्वरूप और उन्हें पाठकों के लिए अधिक आकर्षक बनाने में भी मदद मिली। संक्षेप में, यह समय भारत में पुस्तकों के लिए वैश्विक बाजार का निर्माण प्रक्रिया में था।

नब्बे के दशक में और मौजूदा दशक में कथा और कथेतर साहित्य, कविताओं एवं कहानियों के मुख्यधारा के अनुवाद के अतिरिक्त साहित्यिक प्रकाशन के क्षेत्र में कई प्रयोग किए गए। भारतीय भाषाओं में अनुवाद की मुख्य रणनीति वास्तव में राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में भाईचारे की अवधारणा से जुड़ी थी। कथा जैसे प्रकाशन घर ने विविधता में एकता को दर्शाने वाली सामग्री को प्रस्तुत किया। मौजूदा दशक में अब तक हाशिए में गिने जाने वाले साहित्यों के समावेश ने इस अनुभव को बढ़ाया। हाल के वर्षों में विभाजन, समलैंगिक, दलितों, महिलाओं, धार्मिक अल्पसंख्यकों आदि से संबंधित साहित्यों के प्रकाशन में कई प्रयोग किए गए। एक बार जब इन क्षेत्रों में अनुवाद की संभावनाओं पर गौर किया गया तो भारत में कई प्रकाशन घरों का विकास हुआ। इनमें सबसे प्रमुख गैर-लाभकारी प्रकाशन गैर-सरकारी संस्था कथा है, जिसकी स्थापना 1988 में की गई थी। इसने कई प्रमुख भारतीय भाषाओं में अनूदित कथा साहित्य का संग्रह प्रस्तुत किया। इसने 'कथाविलासम' नामक एक परियोजना शुरू की, जिसका उद्देश्य अनुवाद के सिद्धांतों एवं व्यवहार की संस्थापना करना था। इसने भारत में अनुवाद से संबंधित गतिविधियों के लिए कई कार्यशालाओं और सेमिनारों का आयोजन किया और पुरस्कार भी शुरू किए। इसने देश-भर में अनुवाद से संबंधित प्रतियोगिताओं का भी आयोजन किया।

'स्त्री' (1990 में स्थापित) और 'काली फॉर वीमेन' (1984 में स्थापित) जैसे प्रकाशन समूहों ने कथा साहित्य, कथेतर गद्य, आत्मकथाओं आदि विधाओं में महिलाओं से संबंधित मुद्दों के अनुवाद को प्राथमिकता दी। 'साम्य' ने अपने प्रकाशन के जरिए जाति, छुआछूत आदि जैसे मुद्दों को अंग्रेजी अनुवाद के जरिए उठाया। 'जुबान' अल्पसंख्यक समूहों से संबंधित सामग्रियों के अनुवाद और कम ख्याति प्राप्त लेखकों के अच्छे साहित्यिक कार्यों को सामने लाने के लिए समर्पित है। नवायना पब्लिशिंग हाउस (2003 में स्थापित) कथेतर साहित्य लेखनों पर ध्यान केंद्रित करता है, जो आवश्यक नहीं कि मुख्यधारा में आता हो।

13.5 अंतरराष्ट्रीय प्रकाशन संस्थान और भारतीय रचनाओं के अनुवाद

वैश्विक बाजार के लिए भारतीय अर्थव्यवस्था 1991 के आर्थिक सुधारों के बाद खोली गई। कई विदेशी, बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने भारतीय बाजार में रुचि दिखाना शुरू किया। विदेशी प्रकाशकों ने भारत में अंग्रेजी जानने और पढ़ने वालों पर ध्यान केंद्रित किया। हालाँकि कुछ विदेशी प्रकाशक भारत में स्वतंत्रता के पहले से काम कर रहे थे। 1880 में स्थापित ओरिएंट लांग्मैन लिमिटेड भारत में सबसे पुराना ब्रिटिश प्रकाशन घर है। 1902 में भारत में मैकमिलन की स्थापना मैकमिलन ऑफ ब्रिटेन का प्रतिनिधित्व करने के लिए किया गया था।

मैकमिलन, ओरिएंट लांग्मैन एवं ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस का ध्यान शुरू में भारत में अंग्रेजी पाठ्य पुस्तकों पर केंद्रित था। भारत में अंग्रेजी प्रकाशन के क्षेत्र में शैक्षणिक प्रकाशन अब भी एक बड़ा क्षेत्र है। भारत में ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, मैकमिलन, टाटा मैक्ग्रा हिल, ओरिएंट लांग्मैन, प्रेंटिस-हॉल, रूपा-हार्पर कोलिन्स, सेज और सीगल आदि कुछ बड़े शैक्षणिक प्रकाशक हैं। उनके अन्य प्रकाशनों में भारतीय लेखकों द्वारा अंग्रेजी में लिखी गई कथात्मक एवं कथेतर सामग्रियाँ शामिल हैं। भारतीय लेखकों के अंग्रेजी लेखन एवं अंग्रेजी में अनुवाद को सामने लाने की कोशिशें सबसे पहले संगम बुक्स (ओरिएंट लांगमैन की शाखा), ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, अर्नोल्ड हीनमैन एंड वेल बुक्स ने की। वैसे, अंग्रेजी में लिखने वाले भारतीय लेखकों की पाठ्य सामग्रियों की तुलना में अनूदित सामग्रियों के पाठकों की संख्या कम थी। हालाँकि वाणिज्यिक दृष्टि से अनुवाद का प्रकाशन व्यावहारिक विकल्प नहीं था, फिर भी तमिल, कन्नड़, मराठी, बांग्ला एवं हिंदी जैसी भाषाओं से खूब अनुवाद हुए। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस ने प्रख्यात भारतीय नाटककारों द्वारा लिखित भारतीय नाटकों के कई अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किए, जिससे 'राष्ट्रीय नाट्यशाला' का मार्ग प्रशस्त हुआ। कुछ प्रकाशन समूहों ने अनुवाद की अपनी पुरानी शृंखला के साथ-साथ अनुवाद में नए शीर्षकों का भी प्रकाशन किया।

कुछ लोकप्रिय प्रकाशकों ने अनुवाद से संबंधित कथा साहित्य को शुरू किया। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस ने अनुवाद में रचनाओं की शृंखला शुरू की। मैकमिलन ने अंग्रेजी अनुवाद कार्यक्रम में अपने आधुनिक उपन्यासों के हिस्से के रूप में 80 कथात्मक रचनाओं का प्रकाशन किया। ओरिएंट लांग्मैन ने सत्तर के दशक में संगम बुक्स के नाम से किताबें प्रकाशित कीं, जो फिलहाल 'दिशा' के नाम से जानी जाती है। 'दिशा' ने अंग्रेजी में भारतीय लेखन के साथ-साथ अनुवाद पर भी ध्यान केंद्रित किया। पेंगुइन इंडिया हर साल अनुवाद में 15 शीर्षकों का

प्रकाशन करती है, जबकि रूपा-हार्पर कोलिंस सालाना पाँच अनूदित शीर्षकों का प्रकाशन करता है। सीगल बुक्स ने कई नाटकों के अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किए हैं। साथ ही पिकाडोर इंडिया ने भी भारतीय अनुवाद में रुचि दिखाई है।

हाल के दिनों में विदेशी प्रकाशकों ने भारतीय भाषाओं से अनूदित सामग्रियों की गुणवत्ता, संख्या, पठनीयता को देखते हुए प्रकाशन में रुचि दिखाई है, जिसके कारण भारत में अनुवाद प्रकाशन का बाजार तेजी से फल-फूल रहा है। जैसे-जैसे अनुवाद का बाजार बढ़ रहा है, अच्छे अनुवादों की माँग भी बढ़ रही है। एक व्यावसायिक गतिविधि एवं कैरियर के रूप में अनुवाद को खूब बढ़ावा मिल रहा है। प्रकाशन समूहों द्वारा अनुवादकों को मान्यता प्रदान करने के कारण अनुवाद की उद्योग के रूप में स्थापना हो गई है तथा कॉपीराइट नीतियों एवं संशोधित भुगतान योजना के कारण यह अनुवादकों के लिए यह एक नए व्यावसायिक विकल्प के रूप में सामने आया है। एक समय था जब अनुवादक का नाम-पता ही नहीं चलता था, पर आज अनुवादकों को तकरीबन सभी प्रकाशकों द्वारा उनके परिचय का उचित स्थान मुहैया कराया जाता है।

13.6 सारांश

आपने पिछली इकाइयों में पढ़ा कि किस प्रकार उत्तर-उपनिवेशवाद ने प्रवासी साहित्य (डायस्पोरा लिटरेचर) एवं सबअल्टर्न अध्ययन जैसे अनुशासनों को बढ़ावा दिया। इस इकाई का उद्देश्य आपको यह बताना था कि भारतीय भाषाई राज्यों का गठन कैसे हुआ और भाषाई संदर्भ में राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में भारतीय भाषाओं का विकास किस प्रकार हुआ। इस प्रकार, यह इकाई अनुवाद की राजनीति के बारे में भी बताती है। भारत में अनुवाद को समझने के क्रम में हमने ऐसे समय में भारत में हुए भाषा आंदोलनों के बारे में जाना, जब भारत एक राष्ट्र के रूप में उभरने की कोशिश कर रहा था। साथ ही हमने स्वतंत्रता के बाद के भाषा आंदोलनों के बारे में संक्षेप में जाना। इसके बाद हमने भाषा नीति के विविध पक्षों एवं अनुवाद को बढ़ावा देने में राज्यों की भूमिका के बारे में जानकारी हासिल की। इकाई के अंत में आपने भारत में अनुवाद कार्यों को बढ़ावा देने में भारतीय तथा अंतरराष्ट्रीय प्रकाशन समूहों की भूमिका को भी जाना। जब आप इस अगली इकाई का अध्ययन करेंगे तब आप इस इकाई की प्रासंगिकता को और अधिक समझ पाएंगे।

13.7 अभ्यास के लिए प्रश्न

1. स्वातंत्र्योत्तर काल में भारत में भाषायी आधार पर राज्यों के पुनर्गठन और उससे पैदा हुए तनावों की चर्चा कीजिए।
2. भारत के राज्यों की भाषाओं के प्रोत्साहन के लिए किए गए प्रयासों पर एक निबंध लिखिए।
3. भारत में अनुवाद के प्रकाशन में भारतीय तथा अंतरराष्ट्रीय प्रकाशकों की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

13.8 शब्दावली

उत्तरनिवेशवाद : उपनिवेशकाल में उपनिवेशित समाज में शोषण के विरुद्ध चेतना और उसका प्रतिरोध तथा उपनिवेशकाल के अंत का काल।

डायस्पोरा लिटरेचर : प्रवासी साहित्य।

सबआल्टर्न स्टडीज : उपाश्रित अध्ययन।

13.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

- कोठारी, रीता, 2003, ट्रांसलेटिंग इंडिया, दिल्ली : फाउंडेशन बुक्स।
- श्रीवास्तव, जी.एन., 1970, द लैंग्वुएज कंट्रोवर्सी ,एंड द माइनोरिटीज, दिल्ली : आत्माराम एंड संस।
- *Websites:* www.jstor.org
  www.scribd.com
- कथा, साहित्य अकादमी, नेशनल बुक ट्रस्ट, रूटलेज, मैकमिलन, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, ओरिएंट लांगमैन, रूपा तथा हार्पर कोलिंस आदि प्रकाशन गृहों की वेबसाइटें।